© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 13 | October – December 2017

भीष्म साहनी के उपन्यास में धार्मिक समस्या

योगिता रानी, yogitakharb40@gmail.com

प्रस्तावना

भारतीय तत्कालीन समाज में अनेक समस्याएँ मौजूद थी। इन समस्याओं के निर्मुलन हेतु एक ओर स्वतंत्रता आंदोलन अपने चरमोत्कर्ष पर था। तो दूसरी ओर समाज सुधार की आवाद बुलंद थी। समाज द्वारा युगों से शोषित व पीडित वर्गों को मानवीय अधिकार दिलाने के लिए रूढिवादी मान्यताओं एवं रीति रिवाजों पर भीषण प्रहर किये जा रहे थे। अनेक समाज सुधारक एवं समाज चिंतक सिर पर कफन बाँधकर इस क्षेत्र में उतर आये पुरुष कृत अत्याचारों से पीडित नारी और अबिजात्य वर्ग द्वारा शोषित अछूत इस सुधार के केन्द्र रहे। पाश्चिक दासता से मुक्ति दिलाने के लिए अनेक आंदोलनों का सूत्रपात हुआ। देश में सर्वत्र समाज सुधार एवं वैचारिक परिवर्तन की लहर सी दौड गयी। समाज से ही चेतना पानेवाला संवेदनशील साहित्यकार इस परिवर्तन से कैसे अछुता रह सकता था ? उसने कला और साहित्य के माध्यम से सामाजिक समस्याओं व परिस्थितियों को अभिव्यक्त किया। नारी अस्पृश्यता और मानव जीवन से सम्बन्धित शायद ही कोई ऐसी समस्या हो, जो इन साहित्यकारों के हाथों न पदी हो। भीष्म साहनीजी ने भी समाज में स्थित अनेक समस्याओं को प्रस्तुत करके उसके समाधान करने का प्रयास किया है।

धार्मिक समस्याएँ

धर्म भारतीय जीवन का प्राण रहा है। भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्वों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि में से धर्म का ही प्राधान्य परिलक्ष्यता होता है। समाज, राजनीति तथा संस्कृति का धार्मिक दृष्टिकोण से विश्लेषण होने के कारण अन्य तत्वों को धर्म के सहयोगी रूप में जीवन का उद्देश्य स्विकार किया गया है। इस प्रकार धर्म तो सामाजिक गतिविधियों से इतना सम्बन्ध है कि उसे भारतीय जीवन से भिन्न नहीं किया जा सकता है। धर्म की इतनी अधिक प्रधानता के कारण, कालान्तर में समाज एवं संस्कृति का विघटन होने लगा था, इससे धर्म के साधना, चिन्तन, उपासना, भक्ति एवं अध्यात्मिक पक्ष के स्थान पर व्यावहारिक पक्ष प्रमुख होने लगा। सुनिश्चित सिद्धांतों एवं स्थिर मान्यताओं के अभाव में धर्म विभिन्न व्यक्तियों, सम्प्रदायों, संस्थाओं इत्यादि के शोषण, अत्याचार तथा हीन्विचारों के रूप में विकसित होने लगा। जो धर्म मध्ययुग में निराश एवं, हताश जनता के लिए नवजीवन एवं स्फुर्ति प्रदायक रहा था, वहीं आधुनिककाल युगमें अन्धविश्वासों, विकृतियों, मिथ्याडम्बरों तथा कुरीतियों का समुच्चय बन गया था, लेकिन आधुनिक आन्दोलनों ने युग के गतिशील परिवर्तनों के साथ धर्म विषयक विचारों में सभी नविनताका समावेश किया। धर्म जैसी पवित्र वस्तु को इतने निम्न स्तर पर देखकर साहनी जी ने धार्मिक अव्यवस्थाओं के निराकरण का प्रयास किया है और धर्म के बाह्यडम्बरों, दार्हिम्क अन्धविश्वासों, रूढ़ियों एवं कुरीतियों, धर्म के ठेकेदारों की कुत्सित मनोवृतियों तथा धर्म के नाम पर पाखण्डों, अनैतिकता आदि का विरोध किया है। साहनी जी ने इस समस्या का धर्म की दुर्दशा तथा धार्मिक नेताओं के पतित भ्रष्टाचारी जीवन के रूप का आकलन किया है।

साम्प्रदायिक समस्या

साम्प्रदायिक समस्या यह हिन्दू और मुसलमान सम्प्रदायों से है। भारत में हिन्दूत्व और इस्लाम के झगडे बहुत पुराने समय से चले आ रहे है। अतः हिन्दू मुस्लिम एकता की समस्या नई नहीं है, उसका अपना इतिहास है। इतिहास यह बात भली भांति स्पष्ट हो जाती है कि हिन्दू–मुस्लिम समस्या का आधार धार्मिक नहीं है। वरना उसका विशिष्ट राजनीतिक पहलू है। जिसने एकता के किसी भी प्रयत्न को कारगर सिद्ध नहीं होने दिया। ऊपरी तौर पर उसका रूप धार्मिक दिखाई देता है, लेकिन वास्तव में धर्म को तो राजनीतिक महत्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए, मात्र हथियार के रूप में इस्तेमाल किया गया। यदि राजनीतिक पहलू मूल में नहीं होती तो केवल धर्म के कारण इन दो जातियों में इतना वैमन्स्य कभी नहीं बढता। इसको बढाने का काम आगे अंग्रेजों ने किया है।

भीष्म साहनी के तमस में साम्प्रदायिक समस्या उभर आई हैं। उनके अन्य उपन्यासों में भी पूर्व पंजाब की धरती पर घटे साम्प्रदायिक दंगे उभर आए है, परन्तु, 'तमस' उपन्यास में साम्प्रदायिक समस्या का जो विकार रूप जितनी सिद्धता और उबाल के साथ पनपता हुआ नजर आता है, उतनी शिद्धत और उबले के साथ अन्य किसी उपन्यास में नजर नहीं आता।

धार्मिक नियमों का विरोध या अवहेलना करते हैं, तो साम्प्रदायिक दंगे भडक उठते हैं। इसी सांप्रदायिक समस्या को साहनी जी 'तमस' उपन्यास में उजागर करते हैं। 'तमस' के सन्दर्भ में रमेश उपाध्याय के विचार 'समाज में व्याप्त अज्ञान और अन्धविश्वास ने लोगों को इतना धर्मान्ध बना दिया था, कि विवेक के लिए कोई गुंजाईश नहीं रह गई थी और दोनों तरफ से विवेकशील लोग अपना प्रभाव खो चुके थे।

उनके समझाने बुझाने से साम्प्रदायिक तनाव कम नहीं हो सकता था और अंग्रेज सरकार उस तनाव को दूर करने में समर्थ होते हुए भी उसे दूर करना नहीं चाहती थी। साम्प्रदायिक विष इतना फैल चुका था, कि धर्म और साम्प्रदायों में आस्था न रखने वाले कम्युनिष्टों का भी मनोबल टूटने लगा था। यह वाकई एक जटील परिश्ति है और इसको समझने में किसी तरह